INTERNATIONAL JOURNAL OF ARTS, COMMERCE & EDUCATION
A Multidisciplinary Peer-Reviewed, Refereed, Open Access Journal,
https://avjournals.com/ e-ISSN: 2347-7687, Vol 14, Issue 2, April-June 2026

भारतीय समाज में सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवर्तन: वैश्वीकरण के संदर्भ में एक अध्ययन

सन्त कुमार शुक्ल
शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग, जगद्गुरु रामभद्राचार्य दिव्यांग राज्य विश्वविद्यालय, चित्रकूट (उ०प्र०) – 210204
डॉ. सुशील कुमार त्रिपाठी
शोध-निर्देशक एवं अध्यक्ष, राजनीति विज्ञान विभाग, जगद्गुरु रामभद्राचार्य दिव्यांग राज्य विश्वविद्यालय, चित्रकूट (उ०प्र०) – 210204

सारांश

वैश्वीकरण ने भारतीय समाज में अर्थव्यवस्था, संचार, शिक्षा, उपभोग और सांस्कृतिक अभिव्यक्ति के अनेक रूपों को प्रभावित किया है। किन्तु इसके प्रभाव एकसमान, रैखिक अथवा केवल पश्चिमीकरण तक सीमित नहीं रहे हैं। प्रस्तुत शोध-पत्र प्रकाशित समाजशास्त्रीय अध्ययनों के आधार पर परिवार, विवाह, जाति, वर्ग, लैंगिक संबंध, ग्रामीण–नगरीय जीवन, मीडिया, भाषा और सांस्कृतिक पहचान में परिवर्तन का विश्लेषण करता है। अध्ययन की पद्धति गुणात्मक, द्वितीयक-स्रोत आधारित और विषयगत विश्लेषण है। उपलब्ध साहित्य से स्पष्ट होता है कि वैश्विक सांस्कृतिक प्रवाहों के साथ स्थानीय संस्थाओं का पुनर्संयोजन हुआ है; कुछ समूहों के लिए अवसर बढ़े हैं, जबकि असमानता, असुरक्षित श्रम और सांस्कृतिक वर्चस्व की चुनौतियाँ भी बनी हुई हैं। निष्कर्ष यह है कि भारतीय सामाजिक परिवर्तन को सांस्कृतिक समरूपीकरण की एकमात्र प्रक्रिया न मानकर वैश्विक और स्थानीय शक्तियों की परस्पर क्रिया के रूप में समझना अधिक उपयुक्त है।

मुख्य शब्द: वैश्वीकरण, भारतीय समाज, सामाजिक परिवर्तन, सांस्कृतिक परिवर्तन, स्थानीयकरण, उपभोक्तावाद, पहचान, असमानता

1. प्रस्तावना

भारतीय समाज ऐतिहासिक रूप से विविध भाषाओं, धार्मिक परंपराओं, जातीय समुदायों, जीवन-शैलियों और आर्थिक व्यवस्थाओं का समुच्चय रहा है। औपनिवेशिक शासन, औद्योगीकरण, संवैधानिक लोकतंत्र, शिक्षा के विस्तार और आंतरिक प्रवास ने इसके स्वरूप को निरंतर बदला। बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में संचार क्रांति और वैश्विक आर्थिक एकीकरण ने इन परिवर्तनों को नई दिशा दी। विशेषतः 1991 के आर्थिक सुधारों के बाद भारतीय बाजार, रोजगार, मीडिया और उपभोग के अनेक क्षेत्र वैश्विक नेटवर्क से अधिक सघनता से जुड़े। तथापि इस काल को भारतीय समाज के पूर्ण परिवर्तन या परंपरा के लोप के रूप में देखना उचित नहीं है।

वैश्वीकरण केवल विदेशी वस्तुओं की उपलब्धता या अंतरराष्ट्रीय व्यापार में वृद्धि नहीं है। यह विचारों, प्रतीकों, पूँजी, तकनीक, श्रम, छवियों और जीवन-शैलियों के सीमापार प्रसार की प्रक्रिया है। भारतीय संदर्भ में इसके परिणामों को समझने के लिए यह देखना आवश्यक है कि वैश्विक प्रभावों को विभिन्न सामाजिक समूह कैसे अपनाते, बदलते अथवा अस्वीकार करते हैं। जाति, लिंग, आय, शिक्षा और स्थान जैसी संरचनाएँ इस ग्रहणशीलता को आकार देती हैं।

घरेलू जीवन में डिजिटल संचार, शिक्षा के नए विकल्प, विवाह संबंधी अपेक्षाएँ और पीढ़ियों के बीच संवाद में परिवर्तन दिखाई देता है। दूसरी ओर रोजगार की असुरक्षा, सामाजिक विभाजन और परंपरागत नियंत्रण के

INTERNATIONAL JOURNAL OF ARTS, COMMERCE & EDUCATION
A Multidisciplinary Peer-Reviewed, Refereed, Open Access Journal,
https://avjournals.com/ e-ISSN: 2347-7687, Vol 14, Issue 2, April-June 2026

रूपांतर भी उपस्थित हैं। इसीलिए सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तन का मूल्यांकन अवसर तथा असमानता दोनों को साथ रखकर किया जाना चाहिए।

2. वैश्वीकरण की अवधारणा एवं सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य

वैश्वीकरण को परस्पर निर्भरता, समय–स्थान के संकुचन और सामाजिक संबंधों के सीमा-पार विस्तार से जोड़ा जाता है। गिडेन्स (1990) ने आधुनिकता की संस्थाओं के दूरगामी सामाजिक संबंधों पर प्रभाव को रेखांकित किया, जबकि अप्पादुराई (1996) ने वैश्विक सांस्कृतिक प्रवाहों को विविध परिदृश्यों के माध्यम से समझाया। इन दृष्टिकोणों से संस्कृति को किसी बंद राष्ट्रीय इकाई के बजाय गतिशील विनिमय के क्षेत्र के रूप में पढ़ा जा सकता है।

सांस्कृतिक समरूपीकरण की धारणा के अनुसार वैश्विक मीडिया और बाजार समान उपभोग-रुचियों को प्रोत्साहित करते हैं। इसके विपरीत संकरण या हाइब्रिडिटी का दृष्टिकोण बताता है कि स्थानीय समाज बाहरी प्रतीकों को अपने अर्थों में ढालते हैं। तीसरा दृष्टिकोण असमान शक्ति-संबंधों पर ध्यान देता है: सभी समूहों को वैश्विक प्रवाहों तक समान पहुँच नहीं होती और कुछ की आवाज़ें दूसरों की तुलना में अधिक दिखाई देती हैं।

भारतीय समाज में इन तीनों प्रक्रियाओं के प्रमाण एक साथ मिल सकते हैं। महानगरों में वैश्विक ब्रांडों का प्रसार, स्थानीय भाषाओं में डिजिटल सामग्री का उभार और असंगठित श्रम की असुरक्षा एक-दूसरे के विरोधी नहीं बल्कि वैश्वीकरण की अलग-अलग सामाजिक अभिव्यक्तियाँ हैं।

3. अध्ययन के उद्देश्य

- परिवार, विवाह, जाति, वर्ग तथा लैंगिक संबंधों में परिवर्तन की प्रवृत्तियों को समझना।
- शिक्षा, युवा आकांक्षाओं, रोजगार, मीडिया और उपभोग संस्कृति पर वैश्विक प्रक्रियाओं के प्रभावों की समीक्षा करना।
- ग्रामीण–नगरीय और सामाजिक समूहों के बीच अवसरों तथा असमानताओं का तुलनात्मक अध्ययन करना।
- स्थानीय सांस्कृतिक पहचान, भाषा और परंपराओं के संरक्षण तथा रूपांतरण की प्रक्रियाओं की विवेचना करना।
- भारतीय समाज में वैश्वीकरण से जुड़े प्रमुख सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवर्तनों का विश्लेषण करना।

4. शोध पद्धति एवं अध्ययन की सीमाएँ

यह अध्ययन गुणात्मक एवं विश्लेषणात्मक प्रकृति का है। इसमें प्रकाशित शोध-लेखों, समाजशास्त्रीय पुस्तकों तथा विषय से संबंधित अकादमिक विमर्श का द्वितीयक विश्लेषण किया गया है। सामग्री को परिवार और विवाह, जाति-वर्ग, लैंगिक संबंध, मीडिया, शिक्षा, श्रम, ग्रामीण–नगरीय परिवर्तन तथा सांस्कृतिक पहचान जैसे विषयों में व्यवस्थित कर तुलनात्मक रूप से पढ़ा गया है।

अध्ययन में कोई प्राथमिक सर्वेक्षण या साक्षात्कार नहीं किया गया है। इसलिए प्रस्तुत निष्कर्ष साहित्य में वर्णित प्रवृत्तियों की व्याख्या हैं; इन्हें संपूर्ण भारतीय आबादी के लिए नए सांख्यिकीय अनुमानों के रूप में नहीं पढ़ा जाना चाहिए। विभिन्न अध्ययनों की समयावधि, भौगोलिक क्षेत्र और पद्धति भिन्न होने के कारण प्रत्यक्ष तुलनाएँ सावधानी से की गई हैं।

INTERNATIONAL JOURNAL OF ARTS, COMMERCE & EDUCATION
A Multidisciplinary Peer-Reviewed, Refereed, Open Access Journal,
https://avjournals.com/ e-ISSN: 2347-7687, Vol 14, Issue 2, April-June 2026

5. पूर्ववर्ती शोधों की समीक्षा

Derné (2005) ने भारतीय शहरी संदर्भ में सांस्कृतिक वैश्वीकरण के सीमित प्रभाव को रेखांकित किया। उनके अध्ययन ने संकेत दिया कि विदेशी मीडिया का अधिक उपयोग अपने आप पारिवारिक और लैंगिक मान्यताओं में समान अनुपात का परिवर्तन नहीं लाता। संस्थागत जीवन और सामाजिक संबंध सांस्कृतिक अर्थों को प्रभावित करते रहते हैं।

Ghosh (2011) ने भारतीय सांस्कृतिक परिवर्तन को एकदिशीय प्रक्रिया मानने के विरुद्ध तर्क दिया। उनके विश्लेषण में वैश्वीकरण के साथ सांस्कृतिक समरूपता और स्थानीय पहचान की नई चेतना दोनों विकसित होती दिखाई दीं।

Pavri (2018) ने भारतीय सामाजिक मूल्यों के संबंध में उपलब्ध सर्वेक्षण-साक्ष्यों की समीक्षा करके मिश्रित प्रवृत्तियों को चिह्नित किया। आर्थिक उदारीकरण को स्वतः अधिक उदार सामाजिक दृष्टिकोण के बराबर मानने पर उनके निष्कर्ष प्रश्न उठाते हैं।

Chaudhuri (2024) ने भारतीय समाजशास्त्र में वैश्वीकरण की चर्चा के चयनात्मक स्वरूप की आलोचना की। उन्होंने दिखाया कि उपभोक्ता मध्यवर्ग और नए शहरी स्थानों पर अपेक्षाकृत अधिक ध्यान गया, जबकि ग्रामीण संकट, श्रम की अनिश्चितता और सामाजिक बहिष्करण जैसे प्रश्नों को पर्याप्त महत्त्व नहीं मिला।

Ganguly-Scrase (2002) ने पश्चिम बंगाल के निम्न-मध्यवर्गीय परिवारों के अध्ययन में वैश्वीकरण और महिला सशक्तिकरण के बीच जटिल संबंध दर्शाए। बाजार की सशक्तिकरण संबंधी भाषा और महिलाओं के वास्तविक सामाजिक-आर्थिक अवसरों के बीच अंतर को उन्होंने प्रमुख प्रश्न बनाया।

Kumar एवं Raj (2025) ने ग्रामीण महिलाओं पर वैश्वीकरण के प्रभाव की समीक्षा करते हुए जाति, वर्ग, लिंग और भौगोलिक स्थिति के अंतर्संबंध पर बल दिया। उनका अध्ययन दर्शाता है कि वैश्विक अर्थव्यवस्था से जुड़ाव नए अवसरों के साथ विद्यमान असमानताओं को भी पुनर्सृजित कर सकता है।

6. परिवार, विवाह एवं पीढ़ीगत संबंधों में परिवर्तन

भारतीय परिवार के संबंध में संयुक्त परिवार से एकल परिवार की ओर एक सरल और अपरिवर्तनीय संक्रमण का दावा पर्याप्त नहीं है। निवास की व्यवस्था, संसाधनों का साझाकरण, रिश्तेदारी की सहायता और पारिवारिक अधिकार अलग-अलग गति से बदल सकते हैं। शहरी आवास, रोजगार-गतिशीलता तथा शिक्षा के कारण छोटे आवासीय परिवार बढ़ने की परिस्थितियाँ बनती हैं, लेकिन आर्थिक सहायता, देखभाल और विवाह-निर्णयों में विस्तृत परिवार की भूमिका बनी रह सकती है।

वैश्विक संचार और डिजिटल माध्यमों ने रिश्तेदारी के संपर्क को नए साधन दिए हैं। प्रवासी परिवार वीडियो कॉल, संदेश और धन-प्रेषण के माध्यम से दूर रहकर भी घरेलू निर्णयों में भाग लेते हैं। इस प्रकार भौगोलिक दूरी बढ़ने का अर्थ आवश्यक रूप से सामाजिक दूरी बढ़ना नहीं है।

विवाह के क्षेत्र में शिक्षा, रोजगार, व्यक्तिगत पसंद और ऑनलाइन परिचय के नए माध्यमों ने विकल्पों का विस्तार किया है। साथ ही जाति, धर्म, वर्ग और परिवार की स्वीकृति अनेक परिस्थितियों में निर्णायक बनी रहती है। प्रेम-विवाह और व्यवस्थित विवाह के बीच भी अनेक मिश्रित रूप दिखाई देते हैं, जिनमें व्यक्तिगत सहमति तथा पारिवारिक मध्यस्थता साथ उपस्थित होती हैं।

पीढ़ीगत संबंधों में जीवन-शैली, पेशा, विवाह की आयु, डिजिटल व्यवहार और निजी स्वतंत्रता को लेकर मतभेद उत्पन्न हो सकते हैं। इन मतभेदों को केवल 'मूल्यों के पतन' के रूप में देखना विश्लेषणात्मक रूप से सीमित है; कई बार वे अधिकार, सुरक्षा और जिम्मेदारी के नए संतुलन पर बातचीत का रूप लेते हैं।

INTERNATIONAL JOURNAL OF
ARTS, COMMERCE & EDUCATION
A Multidisciplinary Peer-Reviewed, Refereed, Open Access Journal,
https://avjournals.com/ e-ISSN: 2347-7687, Vol 14, Issue 2, April-June 2026

7. जाति, वर्ग और सामाजिक स्तरीकरण

वैश्वीकरण ने रोजगार, शिक्षा और बाजार के नए क्षेत्र खोले, पर जातिगत असमानता को स्वतः समाप्त नहीं किया। औपचारिक रूप से योग्यता-आधारित भर्ती और उपभोग के साझा मंच जाति की प्रत्यक्ष दृश्यता कम कर सकते हैं, जबकि सामाजिक पूँजी, नेटवर्क, भाषा-दक्षता और संसाधनों तक पहुँच के माध्यम से पुरानी असमानताएँ नए रूप में बनी रह सकती हैं।

नई अर्थव्यवस्था में डिजिटल कौशल, अंग्रेजी भाषा, उच्च शिक्षा और शहरी निवास का महत्त्व बढ़ा है। जिन समूहों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा और तकनीकी साधन उपलब्ध हैं, वे नए अवसरों का अपेक्षाकृत अधिक लाभ उठा सकते हैं। इसके विपरीत सीमित इंटरनेट पहुँच, आर्थिक बाधाएँ और क्षेत्रीय विषमता सामाजिक गतिशीलता को बाधित कर सकती हैं।

उपभोक्तावादी संस्कृति कभी-कभी सामाजिक पहचान को पेशा, आय और जीवन-शैली के आधार पर प्रस्तुत करती है। फिर भी जाति और वर्ग परस्पर अंतःक्रिया करते हैं; बाजार में समान वस्तु की उपलब्धता सामाजिक शक्ति की समानता का प्रमाण नहीं होती।

वैश्वीकरण के अध्ययन में दलित, आदिवासी, पिछड़े वर्ग और अन्य वंचित समूहों के अनुभवों को केंद्र में रखना आवश्यक है। अन्यथा महानगरीय मध्यवर्ग की जीवन-शैली को पूरे भारतीय समाज का प्रतिनिधि मान लेने का खतरा बना रहता है।

8. महिलाओं की स्थिति, लैंगिक संबंध और सशक्तिकरण

शिक्षा, सेवा क्षेत्र, संचार और उद्यमिता के विस्तार ने अनेक महिलाओं के लिए आय, सार्वजनिक उपस्थिति और सामाजिक संपर्क के नए अवसर उत्पन्न किए हैं। पर अवसर की उपलब्धता तथा उस अवसर पर वास्तविक नियंत्रण अलग-अलग प्रश्न हैं। घरेलू देखभाल का असमान भार, सुरक्षित आवागमन की समस्या, वेतन-अंतर और सामाजिक मान्यताएँ महिलाओं की भागीदारी को सीमित कर सकती हैं।

Ganguly-Scrase (2002) ने संकेत दिया कि बाजार आधारित 'सशक्तिकरण' की भाषा को महिलाओं की वास्तविक निर्णय-क्षमता से अलग करके परखना चाहिए। Derné (2005) ने भी यह दिखाया कि वैश्विक मीडिया के नए अर्थ पारिवारिक लैंगिक संरचनाओं को तुरंत परिवर्तित नहीं करते।

डिजिटल मंच महिलाओं को अभिव्यक्ति, पेशेवर संपर्क, प्रशिक्षण और व्यापार के अवसर प्रदान कर सकते हैं। वहीं ऑनलाइन उत्पीड़न, डिजिटल निगरानी और सामाजिक नियंत्रण नए जोखिम पैदा करते हैं। इन विरोधी प्रवृत्तियों को साथ समझना अधिक यथार्थपूर्ण है।

ग्रामीण महिलाओं के संदर्भ में जाति, वर्ग, भौगोलिक दूरी और आजीविका की प्रकृति के संयुक्त प्रभाव को देखना चाहिए। Kumar एवं Raj (2025) की समीक्षा ने ऐसे अंतर्संबंधों को विशेष महत्त्व दिया। अतः महिला सशक्तिकरण का मूल्यांकन केवल रोजगार में प्रवेश से नहीं, बल्कि आय पर नियंत्रण, निर्णय-अधिकार, सुरक्षा और सामाजिक सम्मान से किया जाना चाहिए।

9. शिक्षा, युवा आकांक्षाएँ और रोजगार संस्कृति

वैश्वीकरण ने ज्ञान, कौशल और प्रमाणपत्रों के मूल्यांकन में अंतरराष्ट्रीय संदर्भों को अधिक महत्त्वपूर्ण बनाया है। सूचना-प्रौद्योगिकी, प्रबंधन, संचार, वित्तीय सेवाएँ और अन्य क्षेत्रों में रोजगार की नई आकांक्षाएँ उभरी हैं। डिजिटल शिक्षण सामग्री तथा दूरस्थ सहयोग ने सीखने के साधनों को विस्तृत किया है।

किन्तु शिक्षा के बाजारीकरण और कौशल की असमान उपलब्धता ने नए विभाजन भी पैदा किए हैं। उच्च गुणवत्ता वाले संस्थान, अंग्रेजी दक्षता, डिजिटल उपकरण और मार्गदर्शन तक पहुँच में असमानता होने से

INTERNATIONAL JOURNAL OF ARTS, COMMERCE & EDUCATION
A Multidisciplinary Peer-Reviewed, Refereed, Open Access Journal,
https://avjournals.com/ e-ISSN: 2347-7687, Vol 14, Issue 2, April-June 2026

सभी युवाओं को समान अवसर नहीं मिलते।

युवाओं की पहचान में पेशेवर सफलता, स्वायत्तता, उपभोग और वैश्विक गतिशीलता का महत्त्व बढ़ सकता है। साथ ही स्थानीय भाषाएँ, क्षेत्रीय सांस्कृतिक अभिव्यक्तियाँ और सामुदायिक संबंध उनके जीवन का हिस्सा बने रहते हैं। इस द्वैत को परंपरा बनाम आधुनिकता की कठोर श्रेणियों में नहीं बाँधा जा सकता।

रोजगार के नए क्षेत्रों के साथ अस्थायी अनुबंध, मंच-आधारित काम और आय की अनिश्चितता जैसे प्रश्न भी सामने आते हैं। इसलिए सामाजिक परिवर्तन की चर्चा में अवसरों की संख्या के साथ रोजगार की गुणवत्ता, सुरक्षा और श्रम-अधिकारों को शामिल करना आवश्यक है।

10. मीडिया, डिजिटल संचार और सांस्कृतिक प्रवाह

उपग्रह टेलीविजन, मोबाइल इंटरनेट, सोशल मीडिया और स्ट्रीमिंग माध्यमों ने सांस्कृतिक सामग्री के निर्माण तथा प्रसार को अधिक व्यापक बनाया है। दर्शक केवल निष्क्रिय उपभोक्ता नहीं हैं; वे वीडियो, संगीत, भाषा, हास्य और राजनीतिक विचारों का उत्पादन तथा पुनर्प्रसार भी करते हैं।

Sinha (2025) ने वैश्वीकरण और जनसंचार के अंतर्संबंध में सांस्कृतिक संकरण की प्रक्रिया पर चर्चा की। भारतीय संदर्भ में विदेशी प्रारूपों का स्थानीय भाषाओं, संगीत और कथानकों के साथ मेल अनेक प्रकार की मिश्रित सांस्कृतिक अभिव्यक्तियाँ पैदा करता है।

फिर भी मीडिया का प्रभाव सामाजिक संस्थाओं से स्वतंत्र नहीं होता। Derné (2005) ने दिखाया कि विदेशी मीडिया के व्यापक उपयोग के बावजूद पारिवारिक और लैंगिक मान्यताओं में उल्लेखनीय निरंतरता बनी रह सकती है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि मीडिया-संपर्क को प्रत्यक्ष सांस्कृतिक परिवर्तन का एकमात्र कारण मानना उचित नहीं है।

डिजिटल माध्यमों ने सांस्कृतिक लोकतंत्रीकरण के अवसर खोले हैं, पर एल्गोरिद्मिक दृश्यता, गलत सूचना, भाषाई असमानता और ऑनलाइन घृणा जैसी चुनौतियाँ भी उपस्थित हैं। नागरिकों की डिजिटल साक्षरता और आलोचनात्मक समझ इसलिए सामाजिक परिवर्तन का महत्त्वपूर्ण घटक बनती है।

11. उपभोक्तावाद, जीवन-शैली और पहचान

वैश्विक ब्रांड, विज्ञापन, ऑनलाइन बाजार और दृश्य-मीडिया ने वस्तुओं को केवल उपयोगिता नहीं, बल्कि सामाजिक प्रतिष्ठा तथा व्यक्तिगत पहचान से भी जोड़ा है। पहनावा, भोजन, मनोरंजन, यात्रा और उत्सवों के रूप में नए उपभोग पैटर्न उभर सकते हैं।

मध्यवर्गीय उपभोग को वैश्वीकरण का सबसे स्पष्ट दृश्य संकेत मानने से विश्लेषण अधूरा रह जाता है। Chaudhuri (2024) ने इसी चयनात्मक दृश्यता पर प्रश्न उठाते हुए श्रम और ग्रामीण संकट को भी विश्लेषण में शामिल करने का आग्रह किया।

उपभोग के सांस्कृतिक अर्थ स्थानीय रूप से निर्मित होते हैं। विदेशी भोजन स्थानीय स्वाद में बदल सकता है; वैश्विक फैशन क्षेत्रीय पोशाक के साथ संयुक्त हो सकता है; डिजिटल उत्सव स्थानीय रीति-रिवाजों के नए प्रदर्शन बन सकते हैं। अतः वैश्वीकरण के प्रभाव को केवल सांस्कृतिक प्रतिस्थापन के रूप में समझना अपर्याप्त है।

उपभोक्तावाद के साथ ऋण, पर्यावरणीय दबाव, दिखावटी प्रतिस्पर्धा और वस्तुओं के माध्यम से सामाजिक मूल्यांकन जैसी समस्याएँ भी जुड़ सकती हैं। इसीलिए जीवन-शैली परिवर्तन का मूल्यांकन व्यक्तिगत स्वतंत्रता और सामाजिक लागत दोनों के आधार पर होना चाहिए।

INTERNATIONAL JOURNAL OF ARTS, COMMERCE & EDUCATION
A Multidisciplinary Peer-Reviewed, Refereed, Open Access Journal,
https://avjournals.com/ e-ISSN: 2347-7687, Vol 14, Issue 2, April-June 2026

12. ग्रामीण–नगरीय परिवर्तन, प्रवास और असमानता

वैश्वीकरण के प्रभाव भारतीय नगरों में सेवा क्षेत्र, बाजार, आवास, यातायात और मीडिया की दृश्य उपस्थिति के माध्यम से अपेक्षाकृत अधिक स्पष्ट दिखाई देते हैं। किन्तु ग्रामीण समाज भी श्रम-प्रवास, कृषि बाजार, संचार, उपभोक्ता वस्तुओं और पारिवारिक धन-प्रेषण के माध्यम से वैश्विक तथा राष्ट्रीय आर्थिक प्रक्रियाओं से जुड़ा रहता है।

शहरों में उपलब्ध अवसर ग्रामीण युवाओं को आकर्षित कर सकते हैं, पर प्रवास के अनुभव सामाजिक समूह, शिक्षा, कौशल और लिंग के अनुसार बदलते हैं। प्रवासी श्रमिक शहरों के निर्माण और सेवाओं में योगदान देते हुए भी आवास, स्वास्थ्य, सामाजिक सुरक्षा और सम्मानजनक काम की कठिनाइयों का सामना कर सकते हैं।

ग्रामीण क्षेत्रों में मोबाइल संचार और डिजिटल भुगतान जैसी प्रक्रियाएँ सूचना तथा बाजार से संपर्क बढ़ा सकती हैं, लेकिन कनेक्टिविटी, उपकरणों और उपयोगी कौशल की असमानता इनके लाभ को सीमित करती है।

Kumar एवं Raj (2025) ने ग्रामीण महिलाओं के संदर्भ में वैश्वीकरण के लाभों और सामाजिक पदानुक्रमों की निरंतरता को साथ देखा। इस दृष्टिकोण से ग्रामीण परिवर्तन का अध्ययन केवल नई तकनीक की उपस्थिति से नहीं, बल्कि वास्तविक आजीविका, श्रम की स्थिति और निर्णय-क्षमता में बदलाव से करना चाहिए।

तालिका 1: वैश्वीकरण के सामाजिक प्रभावों का क्षेत्रवार तुलनात्मक विश्लेषण

आयाम	नगरीय संदर्भ	ग्रामीण संदर्भ
रोजगार	सेवा, डिजिटल तथा औपचारिक-अनौपचारिक कार्य का विस्तार	कृषि के साथ गैर-कृषि कार्य और प्रवास पर निर्भरता
शिक्षा एवं कौशल	उच्च शिक्षा और प्रशिक्षण संस्थानों की अपेक्षाकृत अधिक उपलब्धता	डिजिटल पहुँच तथा गुणवत्ता में स्थान-विशेष अंतर
संचार	ऑनलाइन सेवाओं और वैश्विक मीडिया से सघन संपर्क	मोबाइल संचार से बाजार और सूचना तक बढ़ती पहुँच
सामाजिक असमानता	आय, आवास, कौशल और डिजिटल संसाधनों के आधार पर विभाजन	भूमि, जाति, लिंग और अवसंरचना से जुड़ी बाधाएँ

13. भाषा, धर्म, उत्सव और सांस्कृतिक निरंतरता

वैश्वीकरण के संदर्भ में अंग्रेजी और अन्य अंतरराष्ट्रीय भाषाओं का पेशेवर महत्त्व बढ़ सकता है, किंतु भारतीय भाषाएँ डिजिटल मंचों, क्षेत्रीय मनोरंजन और सामुदायिक संचार में नए रूप से सक्रिय भी हुई हैं। भाषा का प्रश्न इसलिए केवल प्रतिस्पर्धा का नहीं, बल्कि बहुभाषिक अनुकूलन का है।

धार्मिक अनुष्ठान और उत्सव भी संचार तथा बाजार के प्रभाव से बदलते हैं। आयोजनों का प्रसारण, डिजिटल निमंत्रण, ऑनलाइन दान, प्रवासी समुदायों की भागीदारी और व्यावसायिक प्रायोजन धार्मिक सार्वजनिकता के नए रूप विकसित कर सकते हैं। साथ ही रीति-रिवाजों का स्थानीय अर्थ और सामाजिक संदर्भ महत्त्वपूर्ण बना रहता है।

सांस्कृतिक पहचान का पुनरुत्थान भी वैश्वीकरण का एक संभावित परिणाम है। Ghosh (2011) ने सांस्कृतिक

INTERNATIONAL JOURNAL OF ARTS, COMMERCE & EDUCATION
A Multidisciplinary Peer-Reviewed, Refereed, Open Access Journal,
https://avjournals.com/ e-ISSN: 2347-7687, Vol 14, Issue 2, April-June 2026

समरूपीकरण के साथ स्थानीय आत्मचेतना और पहचान की सक्रियता पर बल दिया। इससे स्पष्ट होता है कि वैश्विक संपर्क हमेशा स्थानीय भिन्नताओं को समाप्त नहीं करता; कई बार उन्हें अधिक स्पष्ट और संगठित बनाता है।

संस्कृति की रक्षा का अर्थ उसे स्थिर कर देना नहीं है। परंपराएँ ऐतिहासिक रूप से परिवर्तित होती रही हैं। प्रश्न यह है कि परिवर्तन में विभिन्न समुदायों की भागीदारी, सम्मान, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और सांस्कृतिक संसाधनों पर नियंत्रण कितना सुनिश्चित है।

14. तुलनात्मक विश्लेषण एवं चर्चा

विश्लेषण के प्रमुख आयाम

- अवसर बनाम पहुँच: वैश्विक बाजार अवसर उत्पन्न करता है, किंतु उनका लाभ शिक्षा, आय, भाषा और डिजिटल कौशल पर निर्भर करता है।
- एकरूपता बनाम संकरण: वैश्विक प्रतीकों का प्रसार स्थानीय सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों को समाप्त करना आवश्यक नहीं बनाता; अनेक संदर्भों में दोनों का मिश्रण होता है।
- व्यक्तिगत स्वतंत्रता बनाम सामाजिक संरचना: नए विकल्पों के बावजूद जाति, वर्ग, लिंग और पारिवारिक अपेक्षाएँ निर्णयों को प्रभावित करती हैं।

समीक्षित साहित्य में पहला महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष यह है कि वैश्वीकरण का प्रभाव बहुआयामी है। आर्थिक एकीकरण के साथ मीडिया, परिवार, शिक्षा और पहचान के रूपांतरण जुड़े हैं, लेकिन इनके बीच एक-से-एक कारण संबंध स्थापित करना कठिन है। Derné (2005) का अध्ययन विशेष रूप से दिखाता है कि नए सांस्कृतिक संदेश पुराने सामाजिक संस्थागत संबंधों के साथ सह-अस्तित्व में रह सकते हैं।

दूसरा निष्कर्ष यह है कि परिवर्तन की दिशा समान नहीं है। कुछ क्षेत्रों में व्यक्तिगत विकल्प और अभिव्यक्ति के अवसर बढ़ते हैं; अन्य क्षेत्रों में जाति, वर्ग और लिंग आधारित नियंत्रण के रूपांतर दिखाई देते हैं। Pavri (2018) के मिश्रित निष्कर्ष और Ganguly-Scrase (2002) का लैंगिक विश्लेषण इस जटिलता की पुष्टि करते हैं।

- परिवार और विवाह में व्यक्तिगत विकल्पों का विस्तार हुआ, किंतु रिश्तेदारी, पीढ़ीगत जिम्मेदारी और सामुदायिक मान्यताओं का महत्त्व बना रहा।
- जाति, वर्ग, लिंग और ग्रामीण–नगरीय स्थिति वैश्विक अवसरों तक पहुँच को प्रभावित करने वाले महत्त्वपूर्ण कारक रहे।
- महिलाओं की शिक्षा और सार्वजनिक सहभागिता में नए अवसर उभरे, लेकिन घरेलू दायित्व, असुरक्षित काम और डिजिटल जोखिमों की चुनौतियाँ भी रहीं।
- सांस्कृतिक समरूपीकरण के साथ स्थानीय पहचान का पुनर्सक्रिय होना और वैश्विक–स्थानीय सांस्कृतिक संकरण भी दिखाई दिया।
- रोजगार एवं कौशल नीतियों में श्रमिक सुरक्षा, सामाजिक संरक्षण और वंचित समूहों के लिए अवसरों पर ध्यान दिया जाए।
- महिला सशक्तिकरण को केवल बाजार भागीदारी तक सीमित न रखकर निर्णय-क्षमता, सुरक्षा और संसाधनों तक पहुँच से जोड़ा जाए।
- स्थानीय भाषाओं, लोककलाओं तथा सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों के लिए डिजिटल मंच और संस्थागत सहयोग बढ़ाया जाए।

INTERNATIONAL JOURNAL OF ARTS, COMMERCE & EDUCATION
A Multidisciplinary Peer-Reviewed, Refereed, Open Access Journal,
https://avjournals.com/ e-ISSN: 2347-7687, Vol 14, Issue 2, April-June 2026

- भविष्य के अध्ययनों में राज्यों, पीढ़ियों, ग्रामीण–नगरीय क्षेत्रों और आय-वर्गों के बीच प्राथमिक साक्ष्यों पर आधारित तुलना की जाए।
- गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, बहुभाषी डिजिटल साक्षरता तथा तकनीकी संसाधनों तक समान पहुँच सुनिश्चित की जाए।

चौथा निष्कर्ष अध्ययन की दृष्टि से संबंधित है। Chaudhuri (2024) की आलोचना ध्यान दिलाती है कि महानगरीय उपभोक्ता जीवन पर अधिक जोर देने से श्रमिकों, ग्रामीण समुदायों और वंचित समूहों के अनुभव ओझल हो सकते हैं। अतः वैश्वीकरण के प्रभावों की व्याख्या में वर्ग, जाति, लिंग और क्षेत्रीय स्थिति को साथ पढ़ना आवश्यक है।

पाँचवाँ निष्कर्ष यह है कि सामाजिक परिवर्तन को केवल नैतिक उत्थान या पतन की भाषा में नहीं समझना चाहिए। परिवार के रूप बदलने, युवा आकांक्षाओं के विस्तार या डिजिटल मीडिया के बढ़ने के पीछे संस्थागत और आर्थिक परिस्थितियाँ कार्य करती हैं। विश्लेषण को मूल्य-निर्णय से आगे बढ़कर इन परिस्थितियों तथा उनके असमान परिणामों की पहचान करनी चाहिए।

तालिका 2: सामाजिक-सांस्कृतिक परिवर्तन के अवसर और चुनौतियाँ

परिवर्तन का क्षेत्र	प्रमुख अवसर	प्रमुख चुनौतियाँ
परिवार एवं विवाह	व्यक्तिगत विकल्प, दूरस्थ संपर्क	पीढ़ीगत तनाव, देखभाल की व्यवस्था
महिला सहभागिता	शिक्षा, रोजगार, डिजिटल उद्यमिता	असमान घरेलू श्रम, ऑनलाइन उत्पीड़न
मीडिया एवं संस्कृति	अभिव्यक्ति और स्थानीय कला का प्रसार	गलत सूचना, सांस्कृतिक व्यावसायीकरण
उपभोग एवं जीवनशैली	वस्तुओं और सेवाओं तक व्यापक पहुँच	ऋण, दिखावटी प्रतिस्पर्धा, पर्यावरणीय दबाव

15. प्रमुख निष्कर्ष

साहित्य-आधारित विश्लेषण से यह सामने आया कि वैश्वीकरण ने भारतीय समाज में संचार, उपभोग, शिक्षा, रोजगार और सांस्कृतिक अभिव्यक्ति के विकल्पों का विस्तार किया, पर इन अवसरों का वितरण असमान रहा। परिवार तथा विवाह में परिवर्तन के साथ निरंतरता भी दिखाई दी; वैश्विक मीडिया की उपस्थिति ने सामाजिक मान्यताओं को स्वतः प्रतिस्थापित नहीं किया।

जाति, वर्ग, लिंग और ग्रामीण–नगरीय स्थिति वैश्विक अवसरों के उपयोग में महत्त्वपूर्ण मध्यस्थ कारक बने रहे। महिलाओं और युवाओं के लिए नए अवसरों के साथ असुरक्षा, घरेलू दायित्व और सामाजिक नियंत्रण की चुनौतियाँ भी बनी रहीं।

सांस्कृतिक समरूपीकरण के साथ स्थानीय पहचान की पुनर्सक्रियता और सांस्कृतिक संकरण भी देखे गए। इसलिए वैश्वीकरण को भारतीय संस्कृति के एकतरफा क्षरण या पूर्ण आधुनिकीकरण के रूप में प्रस्तुत करना उपलब्ध शोध की जटिलता को कम कर देता है।

16. सुझाव एवं नीतिगत निहितार्थ

समावेशी सामाजिक परिवर्तन के लिए गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, बहुभाषी डिजिटल साक्षरता और सुलभ तकनीकी संसाधनों को प्राथमिकता देना आवश्यक है। विशेषतः ग्रामीण क्षेत्रों तथा सामाजिक-आर्थिक रूप से वंचित समुदायों के लिए डिजिटल पहुँच को केवल कनेक्शन की उपलब्धता से नहीं, बल्कि उपयोगी कौशल और सुरक्षित उपयोग से जोड़कर देखना चाहिए।

रोजगार नीति में नए कौशल के साथ कार्य-सुरक्षा, सामाजिक संरक्षण और समान अवसरों को भी स्थान मिलना चाहिए। महिला सशक्तिकरण के प्रयासों में रोजगार के अतिरिक्त घरेलू देखभाल, सुरक्षित सार्वजनिक स्थान, डिजिटल सुरक्षा और निर्णय-अधिकार पर ध्यान देना चाहिए।

स्थानीय भाषाओं, लोककलाओं और सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों के लिए डिजिटल मंचों पर अवसर बढ़ाना सांस्कृतिक विविधता को मजबूत कर सकता है। साथ ही मीडिया साक्षरता, तथ्य-जाँच और संवेदनशील सार्वजनिक संवाद सामाजिक ध्रुवीकरण तथा गलत सूचना की चुनौतियों से निपटने में सहायक हो सकते हैं।

भविष्य के अध्ययनों में अलग-अलग राज्यों, ग्रामीण एवं शहरी समुदायों, आय-वर्गों और पीढ़ियों के तुलनात्मक प्राथमिक आँकड़े एकत्र करना उपयोगी होगा, ताकि साहित्य में पहचानी गई प्रवृत्तियों का क्षेत्र-विशेष में अनुभवजन्य परीक्षण किया जा सके।

17. निष्कर्ष

भारतीय समाज में वैश्वीकरण के संदर्भ में सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवर्तन एक बहुस्तरीय, असमान और संवादात्मक प्रक्रिया है। वैश्विक अर्थव्यवस्था, संचार और सांस्कृतिक प्रवाहों ने जीवन के अनेक क्षेत्रों को प्रभावित किया, लेकिन स्थानीय संस्थाएँ और ऐतिहासिक असमानताएँ इन प्रभावों को निरंतर नया रूप देती रहीं। आधुनिक उपभोग, डिजिटल संचार तथा नए रोजगार के अवसरों के साथ जाति, वर्ग, लिंग और क्षेत्रीय विषमताओं की उपस्थिति बताती है कि परिवर्तन की दृश्यता और परिवर्तन का लाभ एक ही बात नहीं हैं।

प्रस्तुत विश्लेषण का केंद्रीय निष्कर्ष यह है कि भारतीय समाज को न तो स्थिर परंपराओं के समूह के रूप में और न ही एकरूप वैश्विक संस्कृति में विलीन होते समाज के रूप में समझना पर्याप्त है। अधिक सार्थक दृष्टिकोण वह है जो सांस्कृतिक निरंतरता, स्थानीय पुनर्व्याख्या, सामाजिक संघर्ष और नए अवसरों को एक साथ देखे। समावेशी शिक्षा, सम्मानजनक रोजगार, लैंगिक समानता, डिजिटल न्याय और सांस्कृतिक बहुलता को महत्व देकर वैश्वीकरण की संभावनाओं को व्यापक सामाजिक कल्याण से जोड़ा जा सकता है।

संदर्भ सूची

- अप्पादुरई, ए. (1996). मॉडर्निटी एट लार्ज: कल्चरल डाइमेंशन्स ऑफ ग्लोबलाइजेशन [वैश्वीकरण के सांस्कृतिक आयाम]. यूनिवर्सिटी ऑफ मिनेसोटा प्रेस।
- चौधरी, एम. (2024). ग्लोबलाइजेशन इन इंडियन सोशियोलॉजी: द इनविज़िबल एंड द हाइपरविज़िबल [भारतीय समाजशास्त्र में वैश्वीकरण]. डायोजिनीज़, 65(2), 276–298। https://doi.org/10.1017/S0392192124000014
- डर्ने, एस. (2005). द (लिमिटेड) इफेक्ट ऑफ कल्चरल ग्लोबलाइजेशन इन इंडिया: इम्प्लिकेशन्स फॉर कल्चर थ्योरी [भारत में सांस्कृतिक वैश्वीकरण का सीमित प्रभाव]. पोएटिक्स, 33(1), 33–47। https://doi.org/10.1016/j.poetic.2005.01.002
- गांगुली-स्क्रेस, आर. (2002). रीनेगोशिएटिंग बाउंड्रीज़: सेल्फ परसेप्शन एंड पब्लिक डिबेट ऑन ग्लोबलाइजेशन एंड जेंडर इक्वैलिटी इन इंडिया [वैश्वीकरण और लैंगिक समानता पर विमर्श].

एशियन जर्नल ऑफ विमेन्स स्टडीज़, 8(4), 58–100। https://doi.org/10.1080/12259276.2002.11665937

- घोष, बी. (2011). कल्चरल चेंजेज़ एंड चैलेंजेज़ इन द एरा ऑफ ग्लोबलाइजेशन: द केस ऑफ इंडिया [वैश्वीकरण के दौर में सांस्कृतिक परिवर्तन और चुनौतियाँ]. इंटरनेशनल जर्नल ऑफ कम्पेरेटिव सोशियोलॉजी, 52(1–2)। https://doi.org/10.1177/0169796X1102700203
- गिडेन्स, ए. (1990). द कॉन्सीक्वेन्सेज़ ऑफ मॉडर्निटी [आधुनिकता के परिणाम]. स्टैनफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
- कुमार, ए., एवं राज, ए. (2025). मैपिंग द इम्पैक्ट ऑफ ग्लोबलाइजेशन ऑन द लाइव्स ऑफ रूरल विमेन इन इंडिया [भारत की ग्रामीण महिलाओं के जीवन पर वैश्वीकरण का प्रभाव]. https://doi.org/10.1177/24556327251399278
- पावरी, टी. (2018). इज़ इंडिया बिकमिंग मोर लिबरल? ग्लोबलाइजेशन, इकोनॉमिक लिबरलाइजेशन, एंड सोशल वैल्यूज़ [वैश्वीकरण, आर्थिक उदारीकरण और सामाजिक मूल्य]. जर्नल ऑफ ग्लोबल इनिशिएटिव्स, 13(1)। https://doi.org/10.32727/11.2018.230
- सिन्हा, एस. (2025). ग्लोबलाइजेशन, मास मीडिया, एंड द सोशल चेंजेज़ ऑफ इंडिया [वैश्वीकरण, जनसंचार और भारतीय सामाजिक परिवर्तन]. अत्रास जर्नल, 5(2), 256–264। https://doi.org/10.70091/atras/vol05no2.20